e#LFkyh; oUkLifr dh ftthfo"kk % d.kZ
¼jf'ejFkh ds fo'ks"k lUnHkZ esa½

MkW. lfjrk pkSgku*

lkjka'k

कर्ण महाभारत का एक विशिष्ट पात्र है। वह अपूर्व दानी और उद्भट योद्धा था। युयुत्सा और संघर्ष कर्ण के व्यक्तित्व की भास्वर रेखाएँ हैं। सूर्य पुत्र होकर भी वह सूत पुत्र कहलाया। विपरीत परिस्थितियों में पला कर्ण भाग्य द्वारा छला जाकर भी हार नहीं मानता। महान धनुर्धर एवं महादानी कर्ण समाज के समक्ष कई यक्ष प्रश्न उठाता है किन्तु उनका उत्तर उसे नहीं मिलता। अदम्य जिजीविषा के बल पर कर्ण अपने युग का मृत्युंजयी महानायक बनता है।

ewy 'kCn: मरुस्थलीय वनस्पति, जिजीविषा, नियति, भाग्य, रश्मिरथी, तर्पण।

> ''नहीं फूलते कुसुम मात्र राजाओं के उपवन में,
> अमित बार खिलते वे पुर से दूर कुन्ज कानन में।
> समझे कौन रहस्य? प्रकृति का बड़ा अनोखा हाल,
> गुदड़ी में रखती चुन–चुन कर बड़े कीमती लाल।''[1]

भारतवर्ष के इतिहास में गुदड़ी का एक ऐसा ही कीमती लाल हुआ है जो कर्ण नाम से प्रसिद्ध हुआ। कर्ण महाभारत का एक ऐसा विशिष्ट पात्र है जो महान धनुर्धर, अपूर्व दानी और उद्भट योद्धा था। महाभारत में श्रीकृष्ण ने कर्ण के विषय में कहा है–

> ''त्वमेव कर्ण जानासि वेदवादान् सनातनम्।
> त्वमेव धर्म शास्त्रेषु, सूक्ष्मेषु, परिनिष्ठितः।।
> सिंहर्षभ गजेन्द्राणां बलवीर्य पराक्रमः।
> दीप्तिकान्तिद्युतिगुणैः सूर्येन्दुज्वलनोपमः।।''[2]

अद्भुत गुणों का स्वामी कर्ण वह मरुस्थलीय वनस्पति है जो अहर्निश धूप, ताप, झंझावात एवं अनावृष्टि सहकर भी अपनी अदम्य जिजीविषा के बल पर जीवित रहती है। युयुत्सा और संघर्ष कर्ण के व्यक्तित्व की भास्वर रेखाएँ है। अनुकूल भाग्य लेख अथवा परिस्थितियों से नहीं अपितु अपनी जीवन शक्ति, जुझारू प्रवृत्ति तथा कर्मठ भुजबल से वह स्थितियों को अपने वश में

---

* एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, एमसीएम डीएवी महिला कॉलेज, सेक्टर–36ए, चण्डीगढ़, Email- *saritachauhan1204@gmail.com*

करता है। विपरीत परिस्थितियों में पला कर्ण भाग्य से जमकर लोहा लेता हुआ अपने बलिदान से श्रीकृष्ण जैसे कूटनितिज्ञ को भी यह कहने को बाध्य कर देता है–

''मनुजता का नया नेता उठा है।
जगत् से ज्योति का जेता उठा है।''[3]

कर्ण की जुझारू प्रवृत्ति पर चर्चा करने से पूर्व यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि इस शोधपत्र में कर्ण के चरित्र की चर्चा का आधार राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर द्वारा प्रणीत खण्डकाव्य रश्मिरथी है। ''समाज में संस्थागत हो चुके अन्याय के प्रति आक्रोश की अभिव्यक्ति के लिए दिनकर जी को ऐसे नायक की तलाश थी जो उदात्त चरित्र सम्पन्न होने के अतिरिक्त अनिवार्यतः पराक्रमी हो।''[4] दिनकर जी ने रश्मिरथी में कर्ण को मानवीय धरातल प्रदान किया। उन्होने उसे महाभारतीय कथानक से ऊपर उठाकर जीवन मूल्यों के संस्थापक एवं अद्भुत जीवट के स्वामी के रुप में देखा है।

रश्मिरथी कर्ण को नायक बनाकर रचा गया खण्डकाव्य है। दिनकर जी की सहानुभूति और संवेदना कर्ण के साथ हैं। वास्तव में ''रश्मिरथी कर्ण के चरित्र के उद्धार के लिए रामधारी सिंह दिनकर द्वारा किया गया एक ऐसा महान प्रयास है जहाँ सामाजिक विसंगतियाँ भली–भाँति रेखांकित कर ली गई हैं। दानवीर कर्ण का चरित्र निखरकर हमारे सामने पूरे औदात्य के साथ आता है।''[5] महाभारत युद्ध के बहाने व्यवस्था के क्रूर सत्यों की पड़ताल करती रश्मिरथी कर्ण को भाग्य, देवताओं एवं सत्ता के हाथों छला दिखाकर कई यक्ष प्रश्न भी खड़े करती है।

निस्संदेह कर्ण अपने युग का सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर था। उसके अद्भुत पराक्रम को देखकर कृपाचार्य और द्रोणाचार्य दंग रह जाते है।
द्रोणाचार्य अर्जुन से कहते हैं–

''मुझे कर्ण में चरम वीरता का लक्षण मिलता है।
बढ़ता गया अगर निष्कंटक यह उद्भट भट बाल,
अर्जुन! तेरे लिए कभी यह हो सकता है काल!''[6]

वह कर्ण को ''प्रचंडतम धूमकेतु''[7] तथा ''विकट प्रतिभट''[8] की संज्ञा तक दे डालते हैं। यह सत्य है कि ''अज्ञात कुलशील जातकों के प्रति सामंती समाज का कुलीन वर्ग हृदयहीन क्रूरता का व्यवहार करता है। कर्ण का घोर अपमान हुआ फिर भी वह अपनी जिजीविषा और प्रबल इच्छा शक्ति के बल पर अपने युग का मृत्युंजयी महानायक बना।''[9] यह कर्ण के जीवन की विडम्बना ही कही जा सकती है कि नियति उसे नित नये खेल दिखाती रही और भाग्य उसके वाम ही रहा। सूर्य पिता तथा क्षत्राणी कुन्ती की संतान होकर भी वह सूतपुत्र कहलाया। अर्जुन को द्वन्द्व युद्ध के लिए ललकारने का परिणाम यह होता है कि कर्ण से भरी रंग–भूमि में उसकी जाति पूछी जाती है–

''क्षत्रिय है, यह राजपुत्र है, यों ही नहीं लड़ेगा,
जिस–तिस से हाथापाई में कैसे कूद पड़ेगा?
अर्जुन से लड़ना हो तो मत गहो सभा में मौन,
नाम–धाम कुछ कहो, बताओ कि तुम जाति हो कौन?''[10]

कर्ण अपमान का घूँट चुपचाप नहीं पीता। वह उपस्थित जनसमुदाय को कहता है–

''मैं क्या जानूँ जाति? जाति हैं ये मेरे भुजदंड''[11]

नियति का खेल देखिये कि एक ही माता की संतान होते हुए भी कर्ण सूत पुत्र कहलाया और अर्जुन पृथा पुत्र पार्थ। यह वाम भाग्य ही था जिसके चलते शास्त्र–विद्या प्राप्त करने गया कर्ण शाप लेकर लौटता है–

''सिखलाया ब्रहास्त्र तुझे जो, काम नहीं वह आएगा,
है यह मेरा शाप, समय पर उसे भूल तू जायेगा।''[12]

यह विडम्बना ही है कि कर्ण को जिस समाज से कभी कुछ न मिला वह उसी समाज पर अपना सर्वस्व लुटा देता है। कभी वचनों की आड़ में, तो कभी दान के बहाने उससे उसका सब कुछ छीन लिया जाता है। कर्ण सब कुछ जानते–समझते हुए भी नियति का खेल खेलने को विवश है। इन्द्र द्वारा दान में कवच–कुण्डल माँग लेने पर कर्ण व्यंग्य से कहता है–

''कवच छोड़ अपना शरीर सबके समान करता हूँ।
अब न कहेगा जगत, कर्ण को ईश्वरीय भी बल था,
जीता वह इसलिए कि उसके पास कवच–कुण्डल था।''[13]

कर्ण के व्यंग्य, तर्क–वितर्क, संवेदनाऐं सभी पाठक को अभिभूत करते हैं। नियति एवं विपरीत भाग्य पर प्रश्न उठाता कर्ण कहता है–

''सबको मिली स्नेह की छाया, नयी–नयी सुविधाएँ,
नियति भेजती रही सदा पर, मेरे हित विपदाएँ।
मन ही मन सोचता रहा हूँ यह रहस्य भी क्या है,
खोज–खोज घेरती मुझी को क्यों बाधा–विपदा है?''[14]

किन्तु फिर शीघ्र ही नियति को अगूँठा दिखा वह कहता है कि मेरा जन्म निश्चित ही किसी बड़े उद्देश्य के लिए हुआ है। मैं धरती पर कुछ विशेष करतब करने आया हूँ–

''वह करतब है यह कि शूर जो चाहे कर सकता है,
नियति–भाल पर पुरुष पाँव निज बल से धर सकता है।
वह करतब है यह कि शक्ति बसती न वंश या कुल में

बसती है वह सदा वीर पुरुषों के वक्ष पृथुल में।''[15]

कर्ण अपने कवच और कुण्डलों के रूप में अपना जीवन, कुरूपति दुर्योधन की जीत तथा अर्जुन की उन्नति इन्द्र को सौंप देते है। कर्ण के इस महादान से इन्द्र लज्जा, ग्लानि और पीड़ा से भर जाते हैं। वे कर्ण के समक्ष यह स्वीकार करते हैं कि–

''तू दानी मैं कुटिल प्रवंचक, तू पवित्र मैं पापी,
तू देकर भी सुखी और मैं लेकर भी परिपाती।
तू पहुँचा है जहाँ कर्ण, देवत्व न जा सकता है,
इस महान पद को कोई मानव ही पा सकता है।''[16]

कर्ण के दान से इन्द्र द्रवित हो जाते हैं और पश्चाताप स्वरूप उसे एकघ्नी अस्त्र देने को विवश हो जाते हैं। वह कर्ण को सावधान करते हुए कहते हैं कि तुम इस अस्त्र का प्रयोग मात्र एक बार ही कर सकोगे।

कर्ण के साथ नियति की आँख–मिचौली चलती ही रही। युद्धारम्भ में कुन्ती कर्ण के पास पाण्डवों की जय सुनिश्चित करवाने आती है। वह कर्ण को अपने पक्ष में आने को कहती है किन्तु कर्ण दुर्योधन का साथ छोड़ने से इंकार कर देता है। कुन्ती के यह कहने पर कि मैं तो सुनती थी कि तू बहुत बड़ा दानी है पर मैं तेरे द्वार से खाली जा रही हूँ। यह सुनकर कर्ण कुन्ती को वचन देते हैं कि मैं अर्जुन से तो युद्ध अवश्य करुँगा किन्तु–

''अन्य पाण्डवों पर मैं कृपा करुँगा।
पाकर भी उनका जीवन नहीं हरुँगा।''[17]

कुन्ती इस पर कहती है कि मैं छह पुत्रों की माता बनने आई थी पर चार पुत्रों की माता बनकर जा रही हूँ। कर्ण कुन्ती को आश्वस्त करता है कि–

''कुरुपति न जीत कर निकला, अगर समर से,
या मिली वीरगति मुझे पार्थ के कर से
तुम इसी तरह गोदी की धनी रहोगी।
पुत्रिणी पाँच पुत्रों की बनी रहोगी।''[18]

कृष्ण की चाल में फंसा कर्ण इन्द्र द्वारा दिये एकघ्नी अस्त्र को भीम–पुत्र घटोत्कच पर चला देता है। एक बार फिर नियति के हाथों छला जाकर कर्ण आहत हो सोचता है–

''पार्थ! तू वय का बड़ा बली निकला
या यह कि आज फिर एक बार, मेरा ही भाग्य छली निकला।''[19]

कुंती को दिये वचन को निभाने के कारण कर्ण अर्जुन के अतिरिक्त चारों पाण्डवों को अभयदान दे देता है। वह उनपर शस्त्र नहीं उठाता। सारथि शल्य द्वारा इस बात की आलोचना किये जाने पर वह कहता है–

''समझोगे नहीं शल्य इसको, यह करतब नादानों का है
यह खेल जीत से बड़े किसी मकसद के दीवानों का है।''[20]

अर्जुन को अपने सामने देख कर्ण युद्ध के लिए प्रस्तुत होता है। कर्ण के युद्ध कौशल, उसकी करालता देखकर कृष्ण चिन्तित हो उठते हैं। उन्हें अर्जुन की जय संदिग्ध लगने लगती है। वह कह उठते हैं–

''कर्ण के साथ तेरा बल भी मैं खूब जानता आया हूँ,
मन ही मन तुझसे बड़ा वीर पर इसे मानता आया हूँ।''[21]

कृष्ण पार्थ को सच्चाई बताते हुए कहते हैं–

''मैं चक्र सुदर्शन धरुँ और गाण्डीव अगर तू तानेगा,
तब भी, शायद ही, आज कर्ण आतंक हमारा मानेगा।''[22]

हर बार की तरह नियति कर्ण के विपरीत हो जाती है–

''अगम की राह पर सचमुच अगम है
अनोखा ही नियति का कार्यक्रम है
न जाने न्याय भी पहचानती है।
कुटिलता ही कि केवल जानती है?
रहा दीपित सदा शुभ धर्म जिसका,
चमकता सूर्य सा था कर्म जिसका,
अबाधित दान का आधार था जो
धरित्री का अतुल शृंगार था जो,
क्षुधा जागी उसी की हाय, भू को,
कहें क्या मेदिनी मानव प्रसू को?
रुधिर के पंक में रथ को जकड़कर,
गयी वह बैठ चक्के को पकड़ कर।''[23]

कर्ण का रथ युद्धक्षेत्र में रुधिर के पंक में धँस जाता है। शल्य उसे निकालने का हर सम्भव प्रयास करता है किन्तु रथ टस से मस नहीं होता। चकित हो शल्य कर्ण को कहता है–

''बड़ी राधेय! अद्भुत बात है यह।

किसी दुःशक्ति का ही घात है यह।
जरा सी कीच में स्यन्दन फँसा है,
मगर, रथ–चक्र कुछ ऐसा धँसा है,
निकाले से निकलता ही नहीं है,
हमारा जोर चलता ही नहीं है।''[24]

यह सुनकर कर्ण अपने भाग्य पर हँसता है–

''हँसा राधेय कर कुछ याद मन में,
कहा, हाँ सत्य ही सारे भुवन में,
विलक्षण बात मेरे ही लिए है,
नियति का घात मेरे ही लिए है।''[25]

कर्ण समझ जाता है कि नियति उस पर जाल बिछा रही है और मानो धरती ही उसके रथ–चक्र को खींच रही है। रथ के पहिये को कीचड़ से निकालने के लिए कर्ण रथ से उतर आता है। रथ–चक्र को निकालने के लिए किए गए अथक प्रयासों के बाद भी रथ–चक्र नीचे ही नीचे धँसता जाता है। नीति विशारद कृष्ण भला इस अवसर को हाथ से क्यों जाने देते? वह अर्जुन को इस अवसर का लाभ उठाने के लिए कहते हैं–

''शरासन तान बस अवसर यही है,
घड़ी फिर और मिलने को नहीं है।
विशिख कोई गले के पार कर दे
अभी ही शत्रु का संहार कर दे।''[26]

पार्थ कृष्ण के इस आदेश को शिरोधार्य करता है और निहत्थे कर्ण पर बाण छोड़ देता है। अधर्म पर आधारित इस रण में कर्ण भगवान श्री कृष्ण की लीला का शिकार होता है किन्तु वह एक वीर पुरुष की भांति अपने अंत को गले लगाता है–

''मही! ले सौंपता हूँ आप रथ मैं,
गगन में खोजता हूँ अन्य पथ मैं।
भले ही लील ले इस काठ को तू,
न पा सकती पुरुष विभ्राट को तू।''[27]

भाग्य का खेल देखिये। कर्ण दिन के अवसान काल में मारा गया, जब सूर्य अपनी किरणें समेटता है। कर्ण पुकार उठता है–

''प्रभा मण्डल! भरो झंकार बोलो।
जगत की ज्योतियों! निज द्वार खोलो।

तपस्या रोचिभूषित ला रहा हूँ,
चढ़ा मैं रश्मि–रथ पर आ रहा हूँ।''[28]

कर्ण की मृत्यु के पश्चात् युधिष्ठिर उसके विषय में कहता है–

''बली योद्धा, बड़ा विकराल था वह
हरे! कैसा भयानक काल था वह?''[29]

कर्ण की प्रशंसा में श्रीकृष्ण युधिष्ठिर से कहते हैं–

''समझ कर द्रोण मन में भक्ति भरिये,
पितामह की तरह सम्मान करिये,''[30]

मृत्यु के पश्चात् कर्ण जिस रथ पर चढ़कर इस दुनिया से विदा होता है ''वे सूर्य की नहीं हैं। वे रश्मियाँ स्वयं कर्ण के व्यक्तित्व से फूटती हैं। वह मृत्यु का आलिंगन करता है, पूरे तेज के साथ उसके शरीर से आलोक फूट कर निकला, मृत्यु के समय भी वह अद्भुत प्रभामय था। अंत में कवि ने भगवान कृष्ण से कर्ण की भूरि–भूरि प्रशंसा करा कर कर्ण का आलौकिक तर्पण जैसे कर दिया है।''[31]

निस्संदेह महत्त्व कर्ण के जन्म का नहीं अपितु बलिदान का है। अदम्य जिजीविषा का धनी कर्ण भाग्य, नियति एवं सत्ता का छल खुली आँखों से देखता है किन्तु हार नहीं मानता। यह जानते हुए भी कि पाण्डवों के पक्ष में नीति विशारद भगवान श्री कृष्ण स्वयं खड़े हैं वह अर्जुन को हराने का प्रण लेता है। कर्ण के चरित्र का औदात्य इस बात में है कि विपरीत परिस्थितियों की रेत से भी वह नमी सोख ही लेता है और छला जाकर भी सब पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाता है।

lUnHkZ xzUFk lwph

1. रश्मिरथी, रामधारी सिंह दिनकर, लोकभारती, प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण– 2007, पृष्ठ–14
2. महत्त्वः रामधारी सिंह दिनकर समर शेष है.........
सम्पादक– प्रांजल धर, कुमार अनुपम, प्रकाशक राष्ट्रकवि रामधरी सिंह दिनकर स्मृति न्यास, दिल्ली, संस्करण–2012, पृष्ठ–308
3. रश्मिरथी, पृष्ठ–117
4. महत्त्वः रामधारी सिंह दिनकर समर शेष है.... पृष्ठ–308
5. वही, पृष्ठ–9
6. रश्मिरथी, पृष्ठ–19
7. वही, पृष्ठ–19
8. वही, पृष्ठ–19
9. गोदारण, प्रधान सम्पादक–भरत सिंह, प्रकाशक– 1–220, साकेत कालोनी, अलीगढ़, अंक–7, जनवरी –2009, पृष्ठ–25
10. रश्मिरथी, पृष्ठ–15
11. वही, पृष्ठ–15
12. वही, पृष्ठ–30
13. वही, पृष्ठ–56
14. वही, पृष्ठ–58
15. वही, पृष्ठ–59
16. वही, पृष्ठ–63
17. वही, पृष्ठ–78
18. वही, पृष्ठ–79
19. वही, पृष्ठ–93
20. वही, पृष्ठ–99
21. वही, पृष्ठ–103
22. वही, पृष्ठ–103
23. वही, पृष्ठ–105

24. वही, पृष्ठ–106
25. वही, पृष्ठ–106
26 वही, पृष्ठ–107
27. वही, पृष्ठ–113
28. वही, पृष्ठ–28
29. वही, पृष्ठ–115
30. वही, पृष्ठ–117
31. रामधारी सिंह दिनकर, खगेन्द्र ठाकुर, प्रकाशन विभाग दिल्ली, संस्करण– 2008, पृष्ठ–105